एग्री आर्टिकल्स
(कृषि लेखों के लिए ई-पत्रिका)
वर्ष: 03, अंक: 06 (नवम्बर-दिसम्बर, 2023)
www.agriarticles.com पर ऑनलाइन उपलब्ध
© एग्री आर्टिकल्स, आई. एस. एस. एन.: 2582-9882

बाजरा के मुख्य रोग और उनका प्रबंधन

(*पुष्पेंद्र सिंह शेखावत एवं डा. प्रदीप कुमार)
कृषि अनुसंधान केन्द्र, श्रीगंगानगर
*संवादी लेखक का ईमेल पता: shekhawatpushpendar@gmail.com

बाजरा भारत की एक महत्वपूर्ण खाद्य और चारा फसल है। बाजरा में अन्न-कंड, अरगट (गदाकरस), एन्थ्रेकनोज (काला धब्बा रोग) इत्यादि अधिक हानिकारक है। इसलिए इन रोगों का नियंत्रण आवश्यक है।

अन्न कंड (ग्रेइन स्मट)

रोगजनक: स्फासेलोथेका सोर्गी (लिंक)

यह रोग सभी कंड रोगों में सबसे अधिक हानिकारक है, जिससे पूरे भारत में अनाज की उपज को अत्यधिक नुकसान होता है। यह रोग ज्यादातर बरसाती और सिंचित ज्वार मे पाया जाता है।

रोग के लक्षण: यह रोग केवल दाने बनने के समय में आता है। रोग ग्रस्त बालियों में कुछ दाने सामान्य दाने से बडे होते है। जब रोग की तीव्रता बढ जाती है उस वक्त पुरी बालियाँ कंड रोग से प्रभावित हो जाता है। स्वस्थ दाने के स्थान पर गोल अंडाकार काले रंग की बीजानुधानी बन जाती है जीसमें रोग को फैलाने वाले बीजाणु होते है। इस रोग के कारण कुछ क्षेत्रों में 25 प्रतिशत तक नुकसान दर्ज करने की सूचना है।

रोग चक्र एवं अनुकूल वातावरण: बीजाणु बीज के तल पर जुडे होते है। वे बीज के साथ अंकुरित होते है और मूल क्षेत्र को भेदकर रोपाई (पौधे) को संक्रमित करते है। यदि रोग ग्रस्त बालिया स्वस्थ बालिया के साथ में काटा जाता है और एकसाथ थ्रेशींग कीया जाता है तो बीजाणुधानी फटने से स्वस्थ दाने भी दूषित हो जाते है।

सबसे ज्यादा रोग का संक्रमण धीरे से अंकुरीत होने वाले बीजों पर होता है। बारीश के समय में नमी वाला मौसम इस रोग के लिए अनुकूल है

प्रबंधन: रोगमुक्त बीजों का प्रयोग करे। बीजाणु बाहरी रुप से बीज जनित होते है। इसलिए सल्फर का 4 से 6 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज के हिसाब से बीज उपचार दे। नियमित रुप से खेतों की साफ-सफाई करनी चाहीए।

अरगट (गदाकरस), शर्करा रोग

रोगजनक: स्फासेलिया सोरगी

यह रोग भारत क कई प्रदेश में गंभीर रुप से पाया जाता है। आम तौर पर ज्वार की हायब्रीड वेरायटी में वह रोग देखने को मिलता है।

रोग के लक्षण: ज्वार के अरगट (शर्करा रोग) के पहले लक्षणों में उसके संक्रमित फुलों में से एक शहद जैसा चिपचिपा तरल स्त्राव होता है। जब रोग की तीव्रता बढ़ जाती है तो चिपचिपा तरल स्त्राव पौधों के पत्नौं पर एवं जमीन पे गिरने लगता है।

इसके अलावा रोगग्रस्त फुलों में दाने नहीं बनते। अनुकूल परिस्थितियों में सीधी या धुमावदार हलके भूरे रंग की कवक (फफूंद) विकसित होती है। पौधों पर यही शहद और औस कीडे और चीटियों को भी आकर्षित करती है जो रोग को फैलाने में मदद करती है।

रोगचक्र एवं अनुकूल वातावरण: आमतौर पर रोगजनक जमीन जनित होते है जो प्राथमिक रुप से रोग को फैलाते है, जबकी कीटक और चीटियॉ रोग को आगे फैलाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाति है। सितम्बर मास के दौरान ठंडा और नमीवाला आद्र मौसम रोग के लिए अनुकूल है।

प्रबंधन: रोगप्रतिरोधी वेरायटी को बोना चाहिए। नियमित रुप से फसल की अदल-बदल करनी चाहिए। 20 जुलाई से पहले बीज बोने से रोग की संभावना कम रहती है। बीज को 20 प्रतिशत नमक के विलयन में भिगोने के बाद नीचे बैठे हुए स्वस्थ बीज को पानी से धोना है। इसके बाद उन स्वस्थ बीजों को छाव में सुखाने के बाद उनको बोना है। जाईरम या कैप्टान का 2 ग्राम प्रति लिटर के हिसाब से फूल आने वक्त पर छिडकाव बहोत ही फायदेमंद है।

एन्थ्रेरकनोज, कालव्रणॅ (काला धब्बा रोग)

रोगजनक: कोलेटोट्रिकम सोर्गी या कोलेटोट्रिकम ग्रामीनीकोला

यह रोग ज्वार के मुख्य हानिकारक रोगों में से एक है। आमतौर पर यह रोग जमीन के उपर वाले हिस्से मे मोजूद पौधे (फसल) के भागों को नुकसान करता है। जैसे की पत्ते और बीज को।

रोग के लक्षण: यह रोग फसलों के पुराने (पिछले) अवशेषों एवं बीजों के माध्यम से होता है। इस रोग के मुख्य लक्षणों में पत्तों पर छोटे-छोटे लाल, बैगनी या भूरे धब्बे पड जाते है। रोग का संक्रमण ज्यादातर पोधे के नीचले हिस्से की और पुरानी पत्तियों पर पाया जाता है।

नए पत्ते आमतौर पर संक्रमण से मुक्त रहते है। संक्रमण को तीव्रता के आधार पर कुछ पत्तों पर बीस या उससे भी अधिक धब्बे देखे जा सकते है। जैसे-जैसे रोग बढता जाता है वैसे धब्बे बडे हो जाते है जिसके केन्द्र में काले रंग के बिंदु दिखते है।

जब रोग का संक्रमण तनो पर फैल जाता हैं तब उनमें लाल लकीरें निकलती है। रोग से प्रभावित नई पौधों में धुंधला दिखाई देता है।

रोग चक्र एवं अनुकूल वातारण: यह रोग शुरुआत में संक्रमित बीज एवं फसलों के अवशेषों से होता है, जो हवा के स्पर्श से आगे फैलता है।

बारीश के मौसम मे अगर लगातार बारीश हो, उसके साथ 28-30 सें (°C) जितना तापमान और वातावरण में 90 प्रतिशत से ज्यादा नमी (आद्रता) रोग के लिए एकदम अनुकूल है।

प्रबंधन: रोगमुक्त और रोगप्रतिरोधी वेरायटी को बोना चाहिए। नियमित रुप से फसल की अदल-बदल करनी चाहिए। पिछले फसलों के अवशेषों को नष्ट करना चाहिए। थाइरम या कैप्टान को 4 से 5 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज के दर के हिसाब से बीज उपचार करना चाहिए।

खेतों में जब यह रोग की शुरुआत हो जाए तब 15 दिनों के अंतराल पर कर्बेन्डाजिम 2-3 ग्राम प्रति लिटर पानी का विलयन बनाके 3 बार छिडकाव करना चाहिए।

हरित बाली रोग या मृदुरोमिल आसिता

रोगजनक: स्कलेरोस्पोरा ग्रामीनीकोला

यह रोग बाजरे की फसल का एक बहुत हानिकारक रोग है तथा भारत के लगभग सभी बाजरे के उत्पादित प्रदेशों मे पाया जाता है। इस रोग का भारत में सबसे पहले सन् 1907 में बटलर नाम के वैज्ञानिक ने उल्लेख किया था।

यह रोग राजस्थान गुजरात, महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश, उत्तर प्रदेश, पंजाब, हरियाणा इत्यादी राज्यों में पाया जाता है। इस रोग की वजह से ज्यादा उपज देने वाली वेरायटी में 30 प्रतिशत तक नुकसान होने की सूचना है। इसके अलावा कभी कभी रोग की तीव्रता बढनें से 40-45 प्रतिशत पौधे रोगग्रस्त हो जाते है।

रोग के लक्षण: इस रोग के लक्षणों को तीन भागों में विभाजीत कीया जाता है।

मृदुरोमिल आसिता अवस्था:- रोगग्रस्त पौधे हलके से पीले, छोटे और कमजोर हो जाते है। इसके अलावा पत्तियों पर हरिमाहीनता के कारण वे पीले और आगे जाके सफेद हो जाती है। पुरानी पत्तियॉ नयी पत्तियों से ज्यादा पिली दिखाई पडती है।

सुबह के समय पत्तियों की निचली सतह सफेद असिता से ढकी रहती है। इस रोग के बढने से धारियों का रंग भूरा हो जाता है और शीध्र ही पत्तियॉ सिकुड जाती है। रोग की तीव्रता बढने से पत्ते सुख के गिर जाते है।

हरित बाली अवस्था:- इस रोग के मुख्य लक्षण बाजरे की बाली पर दिखते है। रोगग्रस्त पौधों में बालियॉ बनती नहीं है और अगर बालियॉ बनती है तो वे बालदार हरी पत्तियों जैसी संरचना में बदल जाती है जिससे सम्पूर्ण बाली हरी पत्तियों का गुरछ दिखाई देती है।

इसी लक्षण के वजह से इस रोग को हरित बाली कहते हैं। इस रोग के कारण जो खेत ज्यादा प्रभावित हो जाते है उनमे पैदावार कम मिलती है।

रोग चक्र एवं अनुकूल वातावरण: रोग के संक्रमण का प्राथमिक स्त्रोत बीज जनित या मिट्टी जनित और पौधे के अवशेष है। इस कवक की सुस्त अवस्था 1 से 10 साल तक जीवक्षम रहती है। बरसात के मौसम में बीजाणु रोग का आगे प्रसार करती है।

सुखी और रोगग्रस्त जमीन इस रोग के उत्पति के लिए जिम्मेदार है। पत्तियों पर पानी की उपस्थिति एवं 90 प्रतिशत से ज्यादा नमी (आद्रता) और 22-25 से (°C) जितना तापमान इस रोग के लिए अनुकूल है।

प्रबंधन: हमेषा रोगरहित स्वस्थ और प्रमाणित बीज ही बोना चाहिए। रोगग्रस्त पौधों को शुरुआत मे ही उखाड कर नष्ट कर देना चाहिए जिससे अवशेषों में रहे कवक का नाश हो जाये। बीज को बोने के लिए कम बिछाने वाली और कम जल भराव वाली जमीन का चयन करना चाहिए।

बीज को बोने से पहले रीडोमील एमजेड 72 डबल्यु. पी. दवाई से 8 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज के हिसाब से बीज उपचार करना चाहिए। इस से शुरुआत के दिनों में फसल को इस रोग से रक्षण मिलता है।

इसके अलावा रीडोमील एम. जेड. दवाई को 2 ग्राम प्रति लिटर पानी के साथ खेतों में छिडकाव करने से भी रोग पे काबू पाया जा सकता है। रोगप्रतिरोधी वेरायटी जैसे की जी. एच. बी-351, जी. एच. बी.-558 और आर. सी. बी-2 (राजस्थान संकुल बाजरा-2) इत्यादी बोना चाहिए।

अरगट (शर्करा रोग)

रोगजनक: कलेवीसेप्स फुसीफोर्मीस

य़ह बाजरे का एक प्रमुख रोग है। यह रोग अफ्रीका और भारत के कई हिस्सों में बताया गया है। यह रोग हमारे देश में 1956 मे सबसे पहले महाराष्ट्र में रिपोर्ट किया गया था। भारत में इस रोग का प्रकोप दिल्ली, राजस्थान, कर्नाटक, तमिलनाडु एवं गुजरात में पाया जाता है। इन राज्यों में इस रोग के कारण तकरिबन 70 प्रतिशत तक पैदावार में नुकसान की जानकारी है।

रोग के लक्षण: यह रोग केवल बालियों पर फूल आने के समय में दिखता है। सबसे पहले हल्की, शहद के रंग की ओस जैसा छोटी-छोटी बूंदे संक्रमित स्पाईकिकाओं से निकलती है। जो बाद में भूरे रंग के चिपचिपे द्रव के रुप में बालीयों पर फैल जाता है।

यह मधुबिन्दु अवस्था कहलती है। बाद में मधुरस गायब हो जाता है और बाकी में सामान्य दानों के स्थान पर छोटी, बैगन भूरे रंग के संरचनाए, स्कलैरोशियम जिसे अरगट कहते है।

ऐसी स्कलैरोशियम में अगॅटोक्सिन नामका जहरीला पदार्थ होता है जिसका अधिक मात्रा मे सेवन करने से पशुजीवन विषमय बन जाता है। इसके अलावा भी रोगग्रस्त बालियों पर चूसक कीट के कारण भी रोग का फैलाव होता है।

रोग चक्र एवं अनुकूल वातावरण: रोग को उत्पन्न करने में संक्रमित बालियों से प्राप्त हुए बीजों पर स्थित स्कलैरोशियम या उनकी सतह पर स्थित कोनीडिया की मुख्य भूमिका है। जब मधु-बिन्दु अवस्था होती है तब इन कोनीडिया का फैलाव बारीश, हवा, कीडे से प्रसरीत हो जाती है।

उच्च आर्द्रता वाला मौसम, फूल आने के समय में बारिश का होना और घूप की कमी, बादल छाए रहना ये सब परिस्थितियॉ इस रोग के लिए अनुकूल है।

प्रबंधन: बाजरे की जुलाई के प्रथम सप्ताह में बुवाई करके रोग से बचाव किया जा सकता है। जिस खेत में यह रोग लग गया है उसमें अगले वर्ष बाजरे की फसल नहीं उगानी चाहिए तथा उसके स्थान पर मक्का, मूग या कोई दूसरी फसल लेनी चाहिए।

गरमीयों में खेतों में गहरी जुताई करनी चाहिए। हमेशा प्रमाणित किए हुए स्वस्थ और स्वस्थ बीजों का उपयोग करे। यदि बीजों के साथ कुछ स्कलेरोशीयम के मिलि होने की सम्भावना हो तो इन्हे दूर करने के लिए बीजों की 15-20 प्रतिशत नमक के धोल में डुबाने से कवक की पेषीयॉ उपर तैरने लगती है। तब इनको छानकर अलग करके नीचे बैठे हुए बीजों को पानी से धोकर सुखा लेना चाहिए।

इसके अलावा थाइरम एवं एग्रीसान जी.एन. का 2 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज के हिसाब से बीज उपचार करना चाहिए। खेतों में फूल आने के समय में जाइरम 2 ग्राम प्रति लिटर की मात्रा में छिडकाव करना चाहिए।

कंड रोग

रोगजनक: टोलीपोस्पोरियम पेनीसेलेरी

यह एक बाजरे की फसल का सामान्य रोग है। यह रोग पाकिस्तान, अफ्रिका और भारत में होता है। यह रोग तमिलनाडु, आंध्र-प्रदेश, महाराष्ट्र और राजस्थान में प्रचलित है।

आमतौर पर इस रोग से फसल को सिमीत नुकसान पहुँचता है, परन्तु कुछ वर्षों में इस रोग से अनाज की पैदावार की काफी नुकसान हो सकता है। इस तरह यह रोग 30 प्रति शत तक नुकसान पहौचा सकता है। इस रोग को कालीमा, कन्ही इत्यादी नामों से भी जाना जाता है।

रोग के लक्षण: इस रोग के लक्षण पौधे से बाली बाहार निकलने पर दानों के जमाव के समय में देखा जाता है। बाली में रोगग्रस्त दाने अण्डाकार कंडीत बीजाजुधानी में बदल जाते है। यह कंड बीजाणुधानी बाली के दानों में कहीं-कहीं बिखरे हुए होते है।

बाली में दानों की जगह काले रंग के चूंर्ण से भरे दाने देखने को मिलते है। ये दाने आमतौर पर सामान्य दानों से बडे, चमकीले हरे रंग के और आखिर में जाके काले रंग का हो जाता है और अक्सर एक काले द्रव्यमान के बाहार निकालने के लिए फट जाते है। जब रोग की तीव्रता बढ जाती है तब रोग्रस्त दानों का प्रभाव बढने से पैदावार मे कमी आती है।

रोगचक्र एवं अनुकूल वातावरण: पहली फसल की रोगग्रस्त बालियोंसे कंडबिजाणु जमीन से गिर जाते है और जब बालियों में फूल नीकलने लगते है तब वे अंकुरित हो जाते है। जो हवा के माध्यम से आगे फैलता है। उच्च आर्द्रता एवं रीमझीम बारीश वाला मौसम और अतिसंवेदनशील वेरायटी इस रोग के लिए अनुकूल है।

प्रबंधन: रोग ग्रस्त बालीयों को नष्ट कर देना चाहिए। एक ही खेत में लगातार बाजरा नहीं उगाना चाहिए। स्वस्थ प्रमाणित बीज ही बोना चाहिए। गर्मी के मौसम में मिट्टी में गहरी जुताई करनी चाहिए। बीज की बुवाई के अनुरुप बारिस होने के वक्त ही बुवाई करने रोग को कम कर सकते है।

इसके अलावा 2 ग्राम थाइरम प्रति किलोग्राम बीज एवं 1 ग्राम एग्रोसान जी.एन मिश्रण द्वारा प्रति किलोग्राम बीज के हिसाब से बीजों का उपचार भी लाभदायक है।